P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue- X* June -2016

वर्तमान युग में शांति का संसाधन–योग

अंजलि यादव
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
संस्कृत विभाग,
ज्वाला देवी विद्या मन्दिर
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कानपुर

सारांश

'योग' को आज विश्व मंच पर मान्यता प्रदान की जा रही है। लेकिन यह भारत की प्राचीन विरासत है। शाब्दिक अर्थ में योग का अर्थ जोड़ होता है, इसे हम आत्मा और परमात्मा के मिलन अर्थ में भी समझ सकते हैं। योग का एक दूसरा अर्थ महर्षि पतंजलि ने ''योगः चित्तवृत्ति निरोधः'' कहकर परिभाषित किया है। 'वेद और उपनिषद से आगे बढ़ता हुआ योग महर्षि पतंजलि तक आते–आते कुछ बाहय रूपाकार भी ले लेता है। अष्टॉग योग के अर्न्तगत शरीर सौष्ठव से लेकर आत्मा और चेतना तक को शुद्व, बुद्व और प्रबुद्व बनाने का प्रावधान सन्निहित है।

आज मनुष्य के अर्न्तजगत में तनाव ने घर बना लिया है। योग से सधा तन–मन संस्कार और संस्कृति को संवाहित करने की अकूत क्षमता से भर जाता है। सम्पूर्ण विश्व शांति चाहता है, यह योग है जो शांति देता है, सात्विक शांति। परम शांति। दिव्य शांति। शाश्वत शांति। इस शांति से जो सृजन होगा उसी से एक ऐसा आत्म विश्व बनेगा जिसमें कोई विभेद नही होगा सभी ''आत्मवत् सर्वभूतेषु'' दिखेंगें।

मुख्य शब्द : योग, मन, शांति, कर्म, विश्व कल्याण, स्वस्थ जीवन.

प्रस्तावना

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है–''निर्मल हृदय ही सत्य के प्रतिबिम्ब के लिये सर्वोत्तम दर्पण है,इसलिये यह हमारी साधना हृदय को निर्मल करने के लिये ही है, और जब वह निर्मल हो जाता है, सारे सत्य उसी क्षण उस पर प्रतिबिम्बित हो जाते ह। यदि तुम अभीष्ट परिणाम में शुद्व होओगे तो तुम्हारे हृदय में दुनिया के सारे सत्य प्रकट हो जायेंगे।'' यथार्थतः'योग' यही है कि उसमे हम कितना जोड़ते और जुड़ते हुए प्रकृति व जगत से आत्मविस्तार प्राप्त कर लेते हैं।

योग की व्याख्या करते हुए योगसूत्रकार ने कहा है–

''योगश्चित्तवृति निरोधः'' (1)

अर्थात चित की वृत्तियों का निरोध ही योग है। वेदान्तियों के अनुसार जीवात्मा का परमात्मा से मिलन होना ही योग है। साधक 'ऊ' का जप एवं परमात्मा का ध्यान निरन्तर करता हुआ समाधि मे लीन हो जाता है, ऐसी समाधिष्ठ स्थिति को योग कहा जाता है। न्याय–वैशेशिक दर्शन में योगसाधना से उनका योगज प्रत्यक्ष, नामक अलौकिक सन्निकर्ष होता है।

श्रीमद्भगवद्गीता में योग के अनेक रूपों का वर्णन है, यथा–कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग आदि। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं–

योगस्थः कुरू कर्माणि संग व्यक्तवा धनंजय। (2)
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।। **2/48**

अर्थात तुम योग मे स्थित होकर फल की इच्छा छोड़कर तथा सिद्वि और असिद्वि में समान रहकर कर्म करो। यह सिद्वि–असिद्वि में समान रहना ही 'योग' कहा जाता है।

योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं–

बुद्वियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते। (3)
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।। **2/50**

अर्थात किसी भी कार्य में कुशलता को 'योग' कहते हैं या योग कार्य में कुशलता प्राप्त करने की विद्या है।

प्रश्नोपनिषद् में पिप्लाद ऋषि ने बंह्मविषयक जिज्ञासा के लिये आये हुए छः ऋषियों को एक वर्ष तक और नियन्त्रण में बिताने का आदेश दिया था कि तुम लोग एक वर्ष तक और ब्रह्मचर्यपूर्वक जीवन व्यतीत करो–

''भूय एवं तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया संवत्सरं (4)
संवत्स्यथ यथाकामं प्रश्नान्पृच्छत यदि विज्ञास्यामः
सर्वं ह वो वक्ष्याम इति''।। **1/2**

अर्थात योगदशन और समस्त आध्यात्मिक रहस्यमय शिक्षाओं का सारतत्व यही है कि मनुष्य को स्वयं को साधारण स्तर से ऊँचा उठाकर उच्च कोटि के स्तर पर पहुँचाने से ही परब्रहमस्वरूप जो दिव्य चेतना है उसके साथ साक्षात्कार हो सकता है, अन्यथा नही।

कठोपनिषद् में 'योग' को आत्मज्ञान के साधन के रूप में स्वीकार किया गया है। 'योग' द्वारा मन और इन्द्रियों को रोककर परमात्मा को प्राप्त करने का साधन बताया गया है–

यदा पंचावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह। (5)
बुद्विश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्।
कठोपनिषद् 2/3/10

कठोपनिषद् में 'योग' का स्वरूप इस प्रकार बताया गया है–

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रिय धारणाम् (6)
अप्रमत्तस्तदा भवति योगो किं प्रभवाव्ययौ।।
कठोपनिषद् 2/3/11

''अध्यात्म योगाधिगमेन देवं मत्वा धीरो। (7)
हर्षशोकौ जहाति।''कठोपनिषद् 1/2/12

इसका तात्पर्य यह है कि जब साधक अपने अन्तःकरण की समस्त वृत्तियों से रहित होकर आसन लगाकर परमात्मा का निरन्तर घ्यान करता है, उस समय वह समाधिष्ठ होता है, उस स्थिति में उसे केवल सुख का अनुभव होता है, अतः समाधि 'योग' है।

बृहदारण्यक उपनिषद् में आत्मदर्शन के लिये समाधि को आवश्यक बताया गया है–

''तस्मादेवं विच्छान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षुः समाहितो। (8)
भूत्वात्मनयेवात्मानं पश्यन्ति।।'' 4/4/23

'श्वेताश्वतर उपनिषद्' में 'योग' की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की गई है–

इस उपनिषद् में भी परमात्मा तक पहचने का साधन 'ध्यानयोग' को बताया गया है। ध्यानावस्था मे मनुष्य का मन सर्वथा विशुद्व हो जाता है, क्योंकि उस अवस्था में मनुष्य अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियों को वश में करके केवल एक तत्व पर ही अपना ध्यान केन्द्रित किये रहता है। यह उपनिषद् ध्यान करने की विधि, आसन के प्रकार एवं प्राणायाम का वर्णन करती है–

त्रिरून्नतं स्थाप्य समं शरीर हृदीन्द्रियाणि मनसा संनिवेश्य।
ब्रहमोडुपेन प्रतरेत विद्वान् स्रोतांसि सर्वाणि भयावहानि।। (9)
प्राणान् प्रपीड्येह संयुक्तचेष्टः क्षीणे प्राणे नासिकयोच्छ्वसीत्।। (श्वेता0, 2/9)

इस प्रकार 'वेद' और 'उपनिषद्' से आगे बढ़ता हुआ 'योग' महर्षि पतंजलि तक आते–आते कुछ बाहय रूपाकार भी ले लेता है। उसमें आसनों का समावेश हो जाता है। अष्टांग योग के अर्न्तगत शरीर सौष्ठव से लेकर आत्मा और चेतना तक को शुद्व, बुद्व और प्रबुद्व बनाने का प्रावधान सन्निहित किया गया है। जहा आंसनों से शरीर निरोग रहता है, वंही योग की चरम शक्ति से चित्त समग्रतः स्वस्थ होता है। स्वस्थ तन और मन ही परिवार, समाज, परम्परा, प्रगति और विश्व को समरसता में समाहित करने की शक्ति से सम्पन्न होते हैं। महर्षि पतंजलि ने 'योग' को आकार और विस्तार दिया उसे व्यवहारिक स्वरूप प्रदान किया। अनेक ऋषियों, महर्षियों योगियों और चिन्तकों से आलोकित होता हुआ यह 'योग' अब वैश्विक रूप ले लिया है।

'योग' में वैश्विक क्रांति की अद्भुत शक्ति निहित है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की पहल पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने 21 जून को अंतराष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाने का जो निर्णय लिया है यह सराहनीय कदम है, क्योंकि भारत से आरम्भ हुई सभ्यता की इस विरासत को आज दुनिया स्वीकार कर रही है। कोई पॉच हजार साल पुरानी यौगिक क्रियायें तन–मन को स्वस्थ रखने, जीवन को सुचारू रूप से चलाने का माध्यम रही है। स्वस्थ जीवन मानव अधिकार है, जो आज प्रत्येक मनुष्य को मिलना ही चाहिये।

उद्देश्य

यथार्थ जीवन–सौन्दर्य और आनन्द का स्वाद कैसा और क्या होता है, इससे सर्वथा अपरिचित आज का आदमी, सच तो यह है कि अंधेरी सुरंग की यात्रा कर रहा है। योग जीवन–सौन्दर्य और जीवन–आनंद देता है। मनुष्य का होना देह से ज्यादा मन, बुद्वि और आत्मा के तल पर सार्थक है और इस तल पर मनुष्य को स्थित और स्थिर करने की शक्ति 'योग' देता है 'योग' आत्मसाक्षात्कार कराता है, और देता है वह दृष्टि जिसमें विष्व–समरूपता है। इसी कारण ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' का भाव अर्न्तजगत से सम्पूर्ण दृष्य जगत और अदृष्य–लोक तथा संवेदना के साथ प्रसारित होता है।

निष्कर्ष

संयुक्त राष्ट्र महासचिव ''बान की मून'' का कथन है '' योग एक प्राचीन विधा है, जिसका अभ्यास हर क्षेत्र के अभ्यासकर्ताओं द्वारा किया जाता है। योग शारीरिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य क लिये एक सरल, सुलभ और समावेशी साधन उपलब्ध कराता है।''

आज सम्पूर्ण विश्व शांति चाहता है। मगर शांति प्राप्त करने के संसाधन उसके पास नही है। यह योग है जो शांति देता है, सात्विक शांति। परम शांति। दिव्य शांति। शाश्वत शांति। योग केवल ज्ञान और विज्ञान ही नही है यह वह शाश्वत तथा चिन्मय आलोक है, जिससे सर्वलोक परमात्म–दर्शन से ज्योतित होता है। योगासन, प्राणायाम और ध्यान से आध्यात्मिक विकास होता है, इसके प्रभाव और चमत्कार को बार–बार प्रत्यक्षतः देखा जा रहा है। गर्भोपनिषद् में 'योगाभ्यास' को जन्म मरण के सम्बन्ध से छुटकारा पाने का साधन बताया गया है–(10)

''यदि योऽन्यां प्रमुञ्चामि सांख्यं योगं वा समाश्रये।'' (4)

अतः आज प्रकृति का सहचर होकर ही मनुष्य अपने जीवन का आनन्द ले सकता है। और इसे प्राप्त करने के लिये प्रकृतिगत अमूल्य उपहार 'योग' को ही अपनी सॉस और प्राण चेतना बनाना परम आवश्यक हो गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. योगसूत्र, 1/2
2. श्रीमद्भगवद्गीता, 2/48
3. श्रीमद्भगवद्गीता, 2/50
4. प्रश्नोपनिषद्, 1/2

5. कठोपनिषद्, 2/3/10
6. कठोपनिषद्, 2/3/11
7. कठोपनिषद्, 1/2/12
8. बृहदारण्यकोपनिषद्, 4/4/23
9. श्वेताश्वतरोपनिषद्, 2/8, 2/9, 2/12
10. गर्भोपनिषद्, 4